Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 SHISRRJ | Volume 2 | Issue 3 | ISSN : 2581- 6306

नीतिशतक में कर्म-प्रशंसा

प्रदीप कुमार

वरिष्ठ शोध अध्येता, संस्कृत विभाग, नेहरू ग्राम भारती (मानित विश्वविद्यालय) प्रयागराज (उ.प्र.)

शोधसारांश– कर्म संस्कृत भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है– क्रिया या कार्य। कोई भी घटना केवल अचानक अथवा संयोग वश अनियमित तरीके से नहीं होती। वे एक नियमित सिलसिले में घटित होती है वे एक नियमित क्रम में एक दूसरे का अनुगमन करती है।

मुख्यशब्द- कर्म, आचार्य भर्तृहरि, नीतिशतक, कृत्य, धार्मिक, कार्य।

"कर्म[1] कृ धातु और मनिन् के योग से नपुंसक लिङ्ग में कर्मन् शब्द से निर्मित है जिसका प्रयोग अनेक अर्थो में किया जाता है 1. कृत्य, कार्य कर्म 2. कार्यान्वयन, सम्पादन 3. व्यवसाय, पद कर्तव्य–संप्रति विषवैद्यानां कर्म–मालविकाग्निमित्रम 4. धार्मिक कृत्य (यह चाहे नित्य हो, नैमित्तिक हो या काम्य हो) 5. विशिष्टि कृत्य नैतिक कर्त्तव्य 6. धार्मिक कृत्यों का अनुष्ठान (कर्मकाण्ड) जो ब्रह्मज्ञान या कल्पना प्रवण धर्म का विरोधी है। 7. फल परिणाम 8. नैसर्गिक या सक्रिय सम्पत्ति (धरती के आश्रय के राज में 9. भाग्य, पूर्वजन्म के किये हुए कर्मो का फल इसका वर्णन भर्तृहरि जी ने नीतिशतक में किया हैं 10. गति या कर्म जो सात द्रव्यों में एक माना जाता है। वैशेषिक दर्शन में कर्म की परिभाषा देते हुए कहा गया है कि–

"**एकद्रव्यमगुणं संयोगविभागेस्वनपेक्षकारणं कर्म।**"– वैशेषिक सूक्ति संग्रह तर्क संग्रह में कर्म पाँच प्रकार के बताये गये है–

1. उत्क्षेपण 2. अवक्षेपण 3. आकुञ्चन 4. प्रसारण 5. गमन।

हमारी आवश्यकताएँ जिसे इच्छा या अभिलाषा कहा जाता है। हम कुछ प्राप्त करना चाहते है–

यह प्रथम सीढ़ी है। तब हम सोचते है कि इसे कैसे पाया जाय? यह दूसरी सीढ़ी है फिर हम कार्य करते है ताकि उसे पा सके यह तीसरी सीढ़ी है। यह नियमित क्रम है। प्रत्येक क्रिया के पीछे एक विचार होता है और प्रत्येक विचार के पीछे एक इच्छा होती है।

ये तीन चीजें– क्रिया विचार और इच्छा के तीन धागे हैं जो कर्म की डोरी में बटे रहते हैं। हमारे कर्म, हमारे चारों ओर लोगों को प्रसन्न या अप्रसन्न बनाते है।

कर्म ही सर्व प्रधान है। मनुष्य जैसा कर्म करता है, विधाता उसे वैसा ही फल देता है। इसमें विधाता न तो किसी तरह की रियायत ही कर सकता है और न कर्म के विपरीत ही फल दे सकता है आचार्य भर्तृहरि जी ने नीतिशतक में कहा है कि–

"नमस्यामो देवान्ननु हतविधेस्तेपि वशगा
विधिर्वन्द्यः सोऽपि प्रतिनियतकर्मैकफलदः।

---

1 संस्कृत हिन्दी कोश, वामन शिवराम आप्टे, पृ. 258

फलं कर्मायत्तं किममरगणैः किं च विधिना

नमस्तत्कर्मभ्यो विधिरपि न येभ्यः प्रभवति।।[2]

जो लोग दुख के समय परमात्मा को बुरा–भला कहते है। वास्तव में परमात्मा न किसी को सुख देता है और न दुख। सुख–दुख मनुष्य के प्रारब्धाधीन हैं। प्रारब्ध मनुष्य के किये हुए कर्मों से बनता है कर्म प्रधान है, विधाता भी कर्म के अधीन है। नीतिशतक में कहा गया हैं कि–

"ब्रह्मा येन कुलालवन्नियमितो ब्रह्माण्डभाण्डोदरे

विष्णुर्येन दशावतारगहने क्षिप्तो महासंकटे।

रुद्रो येन कपालपाणि पुटके भिक्षाटनं कारितः

सूर्यो भ्राम्यति नित्यमेव गगने तस्मै नमः कर्मणे।।[3]

जिसका जीवन पूर्व सुकृत कर्म से युक्त होता है, वह हर विपद् से बच जाता है। अगर वह विपदाग्रस्त होता है तो अपने कर्मो के द्वारा स्वयं को उस आपत्ति से मुक्त हो जाता है। नीति शतक में वर्णित है कि–

"वने रणे शत्रुजलाग्निमध्ये महार्णवे पर्वतमस्तकेवा।

सुप्तं प्रमत्तं विषमस्थितं वारक्षन्ति पुण्यानि पुराकृतानि।।[4]

सदाचरण में दुष्ट को सज्जन, मूर्ख को पण्डित, शत्रु को मित्र, परोक्ष को प्रत्यक्ष और हलाहल विष को तत्काल अमृत कर देने की सामर्थ्य हैं। शुक्रनीति में कहा है–

भवतीष्टं सत्क्रियानिष्टं तदिपरीतया।

शास्त्रतः सदसञ्ज्ञात्व त्यक्त्वाऽसत्सत्समाचरेत अर्थात् अच्छे कामों से अच्छा और बुरे कामों से बुरा फल मिलता है, इसलिए शास्त्र–द्वारा अच्छे और बुरे का ज्ञान प्राप्त करके बुरे कामों को त्याग दो और अच्छे काम करो। नीतिशतक में कहा गया है कि–

तामाराधय सत्क्रियां भगवतीं भोक्तुं फलं वाञ्छितं

हे साधो व्यसनैर्गुणेषु विपुलेष्ववस्थां वृथा मा कृथाः।।[5]

बुद्धिमान को किसी काम के प्रारम्भ करने में जल्दी नहीं करनी चाहिए। काम करने से पहले, काम के गुण–दोष और परिणाम का खूब अच्छी तरह विचार करना चाहिए। अगर उस काम का अच्छा फल प्राप्त हो तभी करना चाहिए। यदि उस कार्य के करने से दुखद परिणाम की सम्भावना हो, तो उसे नहीं करना चाहिए।

कीरातार्जुनीयम् में भारवि जी ने लिखा है–

सहसा विद्वधीत न क्रियाम् अविवेकः परमापदां पदम्।

वृणुते हि विमृश्यकारिणं गुणलुब्धाः स्वयमेव सम्पदः।।[6]

किसी कार्य को बिना सोते–विचारे अनायास नहीं करना चाहिए। विवेकहीनता आपदाओं का परम या आश्रय स्थान होती है। अच्छी प्रकार से गुणों की लोभी संपदाएं विचार करने वाले का स्वयमेव वरण करती है, उसके पास चली आती है।

यह संसार कर्मभूमि है। मानव तन दुर्लभ है। जो मनुष्य दुर्लभ मानव जीवन प्राप्त करके विषयास्वाद में समय यापन करता है वह मंदभागी अपना जीवन नष्ट करता है। संसार में आकर मनुष्य को अपना जीवन परोपकार और परमात्मा के भजन

---

2 नीति. 95

3 नीति. – 96

4 नीति. 98।।

5 नीति. 99

6 किरात 2/30

में ही लगाना उचित है। मनुष्य इस कर्मभूमि में उत्तमोत्तम कर्तव्य–कर्म करने को ही भेजा गया है नीति शतक में कहा गया है–

स्थालयां वैदूर्यमय्यां पचति च लशुनं चान्दनैरिधनौद्यैः।

सौवर्णैलाङ्गलाग्रैर्विलिखति वसुधामर्कमूलस्य हेतोः।

छित्त्वा कर्पूरखण्डान् वृतिमिह कुरुते कोद्रवाणां समंतात्।

प्राज्येमां कर्मभूमिं न चरति मनुजो यस्तपो मंदभाग्यः।।[7]

इस प्रकार भर्तृहरि जी ने कर्म प्रशंसा करते हुए इसकी श्रेष्ठता का वर्णन किया। कर्म में हमारा अधिकार है, निष्काम कर्म का वर्णन श्रीमद्भागवतगीता में भी करते हुए कहा गया है कि–

''कर्मण्येवधिकारस्ते, मा फलेषु कदाचन।

मा कर्मफल हेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि।।''

आर्थात् कर्म करने में ही तुम्हारा अधिकार है, फल में कदाचित नहीं कर्मफल का कारक भी तुम नहीं हो। जो अकुशल, विवेकहीन और असंयमित मन से रहता है, उसकी इन्द्रियाँ उसी तरह उसकी अधीन नहीं रहती जैसे अनियंत्रित घोटक सारथि के नियंत्रण में नहीं रहते। किन्तु जो कुशल और विवेकी होता है, जिसका मन संयमित होता है, उसकी इन्द्रियाँ उसी तरह उसके अधीन रहती है जैसे कुशल घोटक सारथि के नियंत्रण में रहते है। जो कुशल और विवेकी नहीं होता, जिसका मन संयमित नहीं रहता, जो मन, वचन तथा कर्म से अपवित्र रहता है, वह मुक्त न होकर ब्रह्म पद को प्राप्त न कर संसार सागर में बार–बार जन्म–मृत्यु के बंधन में बँधता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

क्र.	पुस्तक	लेखक	प्रकाशक	वर्ष
1.	सनातन धर्म	डॉ. प्रभुनाथ द्विवेदी	हिन्दुस्तानी एकेडमी प्रयागराज	2021
2.	संस्कृत–हिन्दी कोश	वामन शिवराम आप्टे	चौखम्भा संस्कृत भवन	2016
3.	नीति–शतक	बाबूहरिदास वैद्य	हरिदास एण्ड कम्पनी प्राइवेट लिमिटेड	2014

7 नीति. 101